लाक्षागृह

राव अरुण यादव

BlueRose ONE.com
Stories Matter
New Delhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Rao Arun Yadav 2025

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.

BlueRose ONE.com
Stories Matter
NewDelhi • London

For permissions requests or inquiries regarding this publication,
please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7310-307-5

Cover Design: Aman Sharma
Typesetting: Pooja Sharma

First Edition: September 2025

संघर्ष को समर्पित

अनुक्रमणिका

लाक्षागृह 1

एक पत्र तुम्हारे नाम 3

चित्र 6

श्रीकृष्ण 8

निष्कर्ष 10

पहलगाम 12

वेग 14

माँ 15

रीढ़ 17

चाँदी 18

निर्माता 20

गर्दिश 22

राशन और शासन 24

संशय 27

भस्म 29

दिल्ली 30

धार 31

अक्स 33

बिंब 35

बिसात 36

कुर्सी 39

जननी 41

मिथ्या 43

दृश्य 45

अनियोजित जीवन 47

अंधेरा 48

वापी 49

लड़कपन 51

वर्जित है 53

अंग्रेजी का 8 55

देवनागरी 56

जीवन का व्यापार 57

जुलूस 58

खोखले सपने 59

कर्म 60

हिना 61

भाव 63

आश्रय 64

सर्वोच्च 66

विधान 68

हार 69

भेद 70

पंद्रह अगस्त 72

दौड़ 74

दीवार 75

कविता 77

भागता हूँ 78

मत 79

नियंत्रक 81

असल संपदा 83

प्रण 85

सुरक्षा 86

विद्रोह 87

आम्रफल 90

अवलंब 92

रोष 93

वेदना 95

रसूख 97

सफर 99

महासंग्राम 100

रिसाव..101
पर्व..103
उमंग..105
बेकारी 106
मौकापरस्ती..107
जाल...108
कल्पनाएँ...109
कर्ता 111
कतराता हूँ..112
गाँव..113
सार 114
साथ 116
थाह..118
नीड़..120
होड़..122
प्रतिज्ञा 124

लाक्षागृह

जय पराजय का भय क्या उनको
जिनका जीवन मरण रण है,
लालसा नहीं ताज-राज की उनको
जिनका कण-कण अर्पण है।

गिरकर भी गिरा नहीं धरा पर
जो समरभूमि में अड़ा रहा,
शेषनाग के फन पर चढ़कर
जो कृष्ण के जैसा खड़ा रहा।

संकट-संकट वह जपते
जिनकी भुजाएं क्षीण हुईं,
उनको भय कैसा कराल का
जिनकी रग-रग प्रवीण हुई।

अनुकूल समय जो ताल ठोकते
प्रतिकूल समय नीति को कोसते,
उनको कब जग ने मान दिया?
पूजा गया वही लोक में
जिसने गरल का पान किया।

भादो में दादुर जैसे उतिराने वाले को
वसुधा ने कब सम्मान दिया?
ज्वाला में जल वह हुआ प्रखर
जिसने सूत-पुत्र सा अपमान पिया।

विपदा उसी को सताती है
जो मोह पाश में रहा पड़ा,
राजतिलक ढूंढे ललाट वह
जो लाक्षागृह में निर्भीक खड़ा।

एक पत्र तुम्हारे नाम

मुझे बदले में
कभी गुलाब मत देना,
न ही
सौन्दर्य के खजाने से
मुझे प्रसन्न करना
न ही
मुझे लुभाने को
जतन और प्रयत्न करना,

हालात कैसे भी हों
जीवन के
तुम्हारी आँखों में
एक सुकून चाहता हूँ
मैं वो पुरुष हूँ
जो अपनी अर्धांगिनी में
क्षत्राणी वाला
जुनून चाहता हूँ,

तुम

मेहंदी और कंगन वाले

हाथों से

जीवन की पतवार चला सको

मैं जब हारूँ किसी वक्त

बनो दुर्गा जैसी

और हाथों मे

तलवार उठा सको,

मुझे रिझाने के

यत्न चाहे न करना

क्योंकि तुम्हें पता है

मेरा सर्वस्व तुम्ही हो,

मैं

सौ बार गिरकर

उठ खड़ा होऊंगा

मेरे जीवन का

वर्चस्व तुम्ही हो,

मेरी डगर

काँटों से भले भरी हो

लेकिन

मन उमंग से

ओत-प्रोत है

उसका कोई क्या बिगाड़ पाएगा

जिसके पास

ऐसा शक्ति श्रोत है,

लगा देना

माथे पर रोली

इसे उपहार समझूँगा,

संकट में

तुम्हारे साथ को

सबसे खरा

श्रृंगार समझूँगा।

चित्र

कूँची में रंग लिए
पन्ने पर
इतिहास दिखाना चाहता हूं
पृथ्वीराज की आंखों के
सपने दर्शाना चाहता हूं
जयचंद अगर समझे तो
यह समझाना चाहता हूं,

आपस में हो भले कलह
शत्रु को आमंत्रण न देना
मसले कैसे भी हों
अपने घर के घर में
हल कर लेना।

एक चित्र है विचित्र
मुगलों के दरबारों का
अपनों पर तलवार उठाते
सिंह पहरेदारों का,

और एक चित्र

फिरंगी किताब से

निकाल कर लाता हूं

मुट्ठी भर अंग्रेजों को

खुद पर हँसता पाता हूँ।

एक दिन

मुख पर भारी रोष लिए

रास्ता लहू में लाल किये

एक चित्र वीरता वाला उभरा

सूरज आजादी का निकला।

श्रीकृष्ण

जीत कृष्ण

है हार कृष्ण

विस्तार कृष्ण

स्वीकार कृष्ण

श्रृंगार कृष्ण

है प्यार कृष्ण

जीवन का आधार कृष्ण,

युद्ध कृष्ण

रणछोड़ कृष्ण

स्मरण कृष्ण

है हरण कृष्ण

अर्पण कृष्ण

तर्पण कृष्ण

मानवता का

दर्पण भी कृष्ण,

सृजन कृष्ण
संहार कृष्ण
काल कृष्ण
अकाल कृष्ण
प्राणों में है
ताल कृष्ण,

आयु कृष्ण
वायु भी कृष्ण
आर कृष्ण
है पार कृष्ण
मझधार कृष्ण
पतवार कृष्ण
जीवन का है
सार कृष्ण।

निष्कर्ष

लिखने बैठते समय
भूमिका बिल्कुल गढ़ी हुई थी
सभी शब्द कतार में थे
पंक्तियां एकदम तनी हुई थीं,

ज्यों पहली पाँति पर अक्षर बिखरे
एक दूजे से ऐसे बिफरे
लिखना था बुद्ध
निष्कर्ष निकला युद्ध,
बीच कोष तक आते-आते
प्रेम-पत्र क्रांतिमय हो जाते

सोचा था उपदेश लिखूंगा
कविता ऐसी विशेष लिखूंगा
जिसे पढ़कर तुम मुस्काओगी
काजल, बिंदी, केश लिखूंगा,
लेकिन कलम तो आप ही चलती
राणा, शिवा, प्रताप ही लिखती

सोच-सोच कर अगर हूं लिखता
फिर इसको इतिहास है दिखता,
दुनिया के मैं रंग दिखाऊं
पर्वत, नदियां, झरने पर ले जाऊं
यह निकालकर कोई युक्ति
जाकर संसद पर ही रुकती।

पहलगाम

कहाँ चले गए
सब लोग ?
बड़ा अकेला सा
महसूस हो रहा है।
वादा तो वापिस जाकर
खींची हुई तस्वीरें साथ
देखने का था
फिर मुझे
यहीं क्यों छोड़ गए?

बड़ा अजीब सा माहौल है
बेबस सा हो गया हूँ,
मेरी कमीज पर
खून के धब्बे हैं
और छेद भी,
लेकिन कमाल की बात है
पहलगाम की सर्द रातें
मुझे अब छू भी नहीं सकती!

लंबे दरख्तों के

खोहड़ों में

कुछ और भी लोग हैं,

न बोलते हैं

न सुनते हैं

वादियों में बस

गुमसुम घूमते रहते हैं।

कई दिनों से

घर के आंगन जाने

की आस लिए,

हमें यहीं छोड़

वो निकल गए

मृत समझ

हमारी लाश लिए!

वेग

शकुनि सी चालों का
जहर में डूबे प्यालों का
बिछाए हुए सब जालों का
पीठ पर फेंके भालों का
जवाब में सबके मौन लिखूंगा।

वक्त तुम्हें दे देगा पाती
कौन यहां है मेरा साथी
एक-एक छल और धोखे को
हर पल और हर मौके को
दोहरा कर याद दिलाऊंगा
मैं एक दिन लौटकर आऊंगा।

गीता ज्ञान का तेज लिए
अर्जुन सा रथ पर वेग लिए
कुरुक्षेत्र में कोहराम मचाऊंगा
जो खोया उसे फिर पाऊंगा
मैं एक दिन लौट कर आऊंगा।

माँ

दीवारें, दरवाजे, चौखट
यह घर नहीं है
घर तो है माँ।

अगर आंगन में
माँ नहीं है
तो बाकी चीजों का
कोई मोल नहीं,
एक शिशु से लेकर
प्रौढ़ावस्था में बैठे
किसी भी जीव का
जीवन है माँ।

बच्चे
अपने ही परिवार में
असहज हो जाते हैं
जब घर पर
नहीं दिखती है माँ,
वह डरते हैं
चुप हो जाते हैं,

पिता चाहे

कितना भी उदार हो

पर अपनी इच्छा

छिपाते हैं।

हम लड़ते भी हैं

नाराज भी करते हैं

तंग, परेशान और

आवाज भी करते हैं,

सब कुछ

सहन कर लेती है

गलती कैसी भी हो

माँ आंचल में भर लेती है।

सब्जी से शिक्षा तक

रोटी से रोजगार तक

सभी व्रत-त्यौहार तक

हमारे लिए

मिन्नतें करती है माँ

अपने आंसुओं को

आंचल से पोंछ

जीवन में रंग भरती है माँ।

रीढ़

लोक निर्माण विभाग की
टूटी हुई तख्ती पर
बंडल तले दबे
दस्तावेजों की सख्ती पर,

उपहार मना है
स्लोगन लिखी हुई दफ़्ती पर
हारे हुए नेता की
मिटी हुई हस्ती पर,

रेंगे या दौड़े
जीडीपी की गति पर
सत्ता में बैठे
किसी आगु की मति पर,

पानी में अंतर्ध्यान
बगुले की भक्ति पर
विश्वास नहीं मुझे
बिना रीढ़ वाले व्यक्ति पर।

चाँदी

बालों में चाँदी उगने लगी है,
जिम्मेदारियों में
जवानी छुपने लगी है,

अपनी रफ्तार को लगाम दे
आ कुछ पल बिताते प्यार के

जताती नहीं हो पर
आँखों में
नाराजगी दिखने लगी है,
मुझसे
बातें कम करने लगी हो
कुछ कहने से पहले
डरने लगी हो,

वह लड़कपन, बचपन
और बेसुध बातें,
वह चाय पर चुगली
और चाँदनी रातें,
समझदार अब
बनने लगी हो,

मुझे याद है
बारिश में तुम्हारा इतराना
घंटों बिठाकर
मुझे कहानियाँ सुनाना,

अब खिड़की से
पर्दे हटाती नहीं हो
बादल को
आँगन में बुलाती नहीं हो
किस्से हर दिन के
सुनाती नहीं हो,

मुझे खेद है
अभी तक जो मैं
कर न पाया,
कई बार
जानबूझकर
दुख भी पहुंचाया,
जरूरत से ज्यादा
पाने की लालसा में
सोना लुटाकर
चाँदी को पाया।

निर्माता

कौन सींचता जंगल को?
उपवन में क्यारी कौन बनाता?
आरण्य के नियम गढ़कर
दुनिया कौन चलाता?

कौन वृक्षों पर सोते
खगों को गिरने नहीं देता?
क्षितिज की ऊंचाई नापते
पंखों को डिगने नहीं देता?

किसने तारामंडल को
आकाश में लटका रखा?
स्वच्छंद तैरते नक्षत्रों को
एक दूसरे से छिटका रखा?

कौन सूरज के
अश्वों को हाँका करता है?
चंद्रमा से धब्बों जैसा
धरती पर झांका करता है?

कौन सृष्टि के इन नियमों का निर्माता है?

गिरजा-मस्जिद-मंदिर में ढूंढें

क्या इसी का नाम विधाता है?

गर्दिश

सौ में एक मिल जाए
तो जीवन धन्य समझना
कोई वचनों पर टिक जाए
तो जीवन धन्य समझना,

शाखों से गिरे
सूखे पत्तों की तरह
उड़ते लोग हैं यहां
तूफान में एक भी दिख जाए
तो जीवन धन्य समझना,

यह भीड़
यह मजमा
यह रौनक
झूठ है
छलावा है,
यह अदब
यह फिक्र
यह जीहुजूरी
फरेब है
दिखावा है,

अर्जी

पर्ची

महफिल और कतारें

सब निरर्थ हैं

जब गर्दिश में हो सितारे

तो सब व्यर्थ है।

राशन और शासन

देश,

राशन और शासन

शुरुआत

यहीं से हुई थी,

इतिहास के

आलाप ने

विकास की रफ्तार को

धोखा जो दिया,

एक क्विंटल

गेहूं की बिजाई पर

डेढ़ क्विंटल

प्राप्ति के बाद

मन में सवाल आया

कौन सी चिड़िया?

कौन सा सोना?

शास्त्री जी ने

उपवास का मंत्र दिया

भूख से तड़पती

पसलियों ने
सरकारी फरमान समझ
अपनाया,

बड़े फार्महाउस में
केक खाते हुए
किसी साहित्यकार के
मन ने हिलोरे ले
लिख डाला
देश की धरती सोना उगले
उगले हीरा मोती

लेकिन
कई पीढ़ियों की तपस्या और
उनकी जिंदगी को
इस धरती में
मिलाने के बाद भी
सुनिहारे की
दुकान तक नहीं
पहुँच सके,

बातें अटपटी हो सकती हैं
लेकिन सत्य हैं,
कृषकों ने
जीवन के कई साल

भस्म किए

इसी मिट्टी में

सच को

ढूँढने के लिए!

संशय

मैं दिल से
उड़ना चाहता हूँ
पर डर है
पैरों से जमीन
खिसक न जाए,

मैं रफ्तार पकड़ना
चाहता हूँ
पर डर है
सब पीछे
न रह जाएं,

मुझे ऊंचाई
पसंद है
उठना चाहता हूँ
पर डर है
नीचे से
वास्ता न छूट जाए,

समुद्र सा वेग लिए
उफनना चाहता हूँ

पर डर है

सुनामी सी

बर्बादी न ले आऊँ,

कभी सोचता हूँ

बादल बनकर

सूरज को ढक दूँ

पर डर है

दुनिया में

अंधकार न कर दूँ,

बढ़ूँ आसमान सा

चलूँ तूफान सा

लेकिन संशय

इन सारे सपनों से

डर है

राह देखते अपनों से !

भस्म

अहंकार भस्म
श्रृंगार भस्म,
तिरस्कार भस्म
अंगीकार भस्म,
सत्य भस्म
असत्य भस्म,
मत भस्म
गत भस्म,
रूप भस्म
कुरूप भस्म,
भूप भस्म
बहरूप भस्म,
अनुष्ठान भस्म
प्रतिष्ठान भस्म,
पहचान भस्म
वरदान भस्म,
भस्म ही स्वरूप सत्य का
भस्म ही फल हवन-यज्ञ का।

दिल्ली

चला तो दो था
बिका तो सौ था
हाथ में धेला लिए
धोती कुर्ता मैला लिए
कहने को है अन्नदाता
खुद को पोषित कर न पाता,

खेती-बाड़ी गैया चर गई
भात मांगती गुड़िया मर गई
मिड-डे मील के जिए सहारे
इस दुनिया के पालनहारे,

कनक बीज कर चिल्लर चुगते
साहूकार के हाथों लुटते
गेहूं, चावल, गन्ना, तिल्ली
बोए किसान काटे दिल्ली।

धार

सौ बार हारोगे,
आओगे मनोबल और
तैयारी से,
टूट जाओगे
पेड़ से झड़े
पत्ते की तरह,

योजना बनाओगे,
षड्यन्त्र रचोगे,
फिर मात खाओगे!

सौ बार हारोगे,
कुछ दिन सीखकर
फिर खो जाओगे,
अबकी बार
नए तरीके ढूँढोगे,
लेकिन हश्र दोहराओगे,

कभी
अपनों को तोड़ोगे,
कभी

सपनों से टकराओगे!

लेकिन बता दूँ,

दूर ही रहना

निश्चित तुम्हारी हार है,

मेरे हर

किनारे पर धार है!

अक्स

मैं हूँ क्योंकि
मैं हूँ ही नहीं!
यही है
बने रहने का
मूल मंत्र,
जो पहचानो तो
राम-राम,
वरना अपने
काम से काम।

तुम
ढूंढ कर दिखा दो!
मिलूँगा ही नहीं
क्योंकि मैं
हूँ ही नहीं,
मुझमे तुम्ही हो
जो तुम चाहो
जैसा तुम चाहो,
तो मैं हूँ ही कहाँ?

मेरा अक्स भी

तुम्हारे जैसा हो चला

और रंग भी,

मेरा काम भी

और ढंग भी।

तुम देखोगे और

मैं नहीं दिखूँगा,

क्योंकि मेरे

होने के लिए

मेरा न होना

बहुत जरूरी है,

कुछ पाने के लिए

खुद को खोना

बहुत जरूरी है।

बिंब

क्या ऊंचाई पर
बैठे व्यक्तियों के
सपने समान हो जाते हैं?
क्या बिंब बसता है
उनकी बंद आंखों में
जो लोग महान हो जाते हैं?

क्या उन्हें
बचपन और नादानियां
याद रहती हैं?
क्या माँ का आँचल
और कहानियाँ
याद रहती हैं?

गांधी, नेहरू, इंदिरा, मोदी के
क्षितिज पर जाना चाहूँगा,
वहां पहुंचकर
नीचे आवाज लगाना चाहूंगा,
क्या बिंब बसता आंखों में
तुम्हें बताना चाहूंगा।

बिसात

न मर्म जाना
न धर्म,
अगर मर्म जानते तो
सामंतों और मजदूरों में
खाई न होती
अगर धर्म जानते तो
मध्य एशियाई चिंगारी
आई न होती,

तर्क इतना बढ़िया बनाया
कि कुतर्क बन गया
कोई मालामाल
किसी का नर्क बन गया,

किसी ने
स्तन ढकने पर भी
कर मांग लिया
यह बात
मानवता को
कलंकित कर गई,

क्या फर्क दबे को

कोई राज करे

की नीति से

आक्रान्ताओं की

संख्या बढ़ गई,

हाशिये पर पड़ा व्यक्ति

जिसकी कोई जात नहीं

लेकिन अब रेखा ऐसी कि

गरीबी पर कोई बात नहीं,

अलग-अलग जातिगत सेना में

विभक्त होता देश

जो लकीर खींच रहे

छोड़ जाएंगे स्वदेश,

हम इसी मिट्टी में जाया होंगे

फिर यहीं उपजेंगे

यहीं रोयेंगे

हसेंगे

दहाड़ेंगे

फिर गरजेंगे,

फिर कहता हूँ

कृषक

मजदूर

गरीबों की

कोई जात नहीं होती,

अकेले अपना-अपना

दंभ भर कर देख चुके

इतिहास गवाह है

कमजोरों की

कोई बिसात नहीं होती।

कुर्सी

कुर्सी की
अपनी कोई विचारधारा नहीं
वह समान रहती है
बस नए चढ़े
सफेद तौलिए की सफेदी पर
दाग कम होते हैं
जैसे-जैसे समय बीतता है
दाग उतिराने लगते हैं,

किसी की नीति
धन-बल बटोरने की
तो कोई धर्म रक्षा का
संकल्प लिए बैठा है
कोई उल्टी दिशा में
धारा बहाने पर आमादा
तो किसी की झोली में
नया-नया वादा,

पाँच साल बाद

कुर्सी के बाहर से

अपना अपना

विचार धोकर चमकाने

फिर से वही राग

सुनाने का नाम

राजनीति है।

जननी

चौंक न जाना
आधी रात में,
शरद ऋतु
और बरसात में,
जेठ की दोपहरी या
चैत्र बैसाख माघ में,

प्रसु की थापी और
शिशु संग आलाप सुन,
छाती से चिपका कर
नव जीवन का राग सुन,
बुद्ध सी शीतलता
और कौरवों सी आग सुन,
चौंक न जाना
आधी रात में
किसी नवजात का
विलाप सुन,

जननी की गोद में
असंख्य महाभारतों सा
रण पलता है,
एक-एक थापी पर
युगों का रथ चलता है,

मत चौंकना
उस गंभीर चेहरे को देख,
घुप्प अँधियारे में
खुले सवेरे को देख
दुग्ध धारा संग
बहता प्रवाह
महान सृजन
और विनाश का,
सृष्टि से चिपक
जवाक हिलोरे लेता तो
हिलता सिंहासन
भूमंडल और आकाश का।

मिथ्या

न तो मैं यह मानूँगा
कि पृथ्वी गोल है
न मैं उसे पिंड की तरह
लटका देखता हूँ,

गोल है तो
मानचित्र में दोनों छोर
मिलाने पर
समुद्र का पानी
गिरता क्यों नहीं?
और पिंड की भांति
लटकी है तो
मेरा बगीचा आसमान और
आसमान जमीन कब बनेगा?

और जब हम
ऊपरी सतह पर हैं
तो साइबेरियन पक्षी
चाँद तक क्यूँ नहीं
चले जाते?

यहीं क्यों

घूमते रहते हैं?

मुझे लगता है

पृथ्वी डिब्बे की भांति

बंद चपटी और चकोर है,

किसी रेत के टीले पर फंसी

यह दुनिया

मिथ्या भरता भूगोल है!

दृश्य

आँखों की

अपनी समझ होती है

क्योंकि इन्हीं में

दृश्य अमर हो जाते हैं,

जो माँ के

वात्सल्य से शुरू हो

पिता की

सीख से फलते हैं।

इन्हीं में

काम है

लाज है

आग है

ताज है

प्यार है

घृणा है

आनंद है

त्याग है,

इन्हीं में

इतिहास है

आजादी है

जंजीरें हैं

उम्मीदें हैं

क्रांति है

शांति है,

तमाम जो बीता है

तमाम जो आएगा

वो आँखों में दिखता है

एक दृश्य की तरह

जैसे उसे जिया हो

बिना जिए।

अनियोजित जीवन

अनियोजित जीवन का
अपना उल्लास है,

यहाँ निवृत्ति के लिए
दिन नहीं गिनने
कभी थापी तो
कभी उपहास है,

चौराहे से चाँद तक का सफर
कंटीली सुनहरी आकस्मिक डगर।

अंधेरा

पुराने बांस पर लटका हुआ
एक कांच का लट्टू दिखा
अंधेरे रास्ते पर चमकता,

रास्ते सारे मौन थे
स्वान थक कर सो चुके
काले जलधर में डूबकर
नक्षत्र सारे खो चुके,

सरसराहट में कदम की
साया सा तन पर झपटता
वृक्षों की छाया चीर कर
कोई अंधेरे में भटकता,

लालसा छू लेने की
उस पुराने बांस को
धुले हुए एक तार को
लटके हुए एक कांच को।

वापी

टूट पड़ने के लिए
पैदा हुआ हूँ,
इसे समझने में
खुद को कैद किया,
सफलता मानो
किसी स्वप्न सुंदरी का नाम है
जिसे मुझ जैसे
अयोग्य प्राणी से नफरत हो,

कागज घिस
खुद को योग्य बना सकूँ
भागते पहिये पर
लगाम लगा सकूँ,
न वक्त रुका
न लक्ष्य मिला,
ताकती कनखियों से
खुद को समेटता
टूट पड़ा
चढ़ जाने को,

योग्य क्या अयोग्य
रण में जीता
जो तैयार रहा
मर जाने को,

सफल-असफल का
भेद क्या उसको
जिसको
वेदी पर हो जलना,
रोक देते वो
गति काल की
जिनका काम हो
बस चलना,

कुछ लोगों को श्राप है
व्यर्थ उनका विलाप है,
क्या बसंत,
शीत, हरियाली में
क्या चंदन,
सर्प मलयाली में,
जिनके प्रण-कण
रक्त प्रतापी हैं
वे शुष्क धरा के
वापी हैं।

लड़कपन

एक बच्चे ने
रद्दी के कागज में
रंग भर दिया,
अपनी उमंगों से यूं मोड़ा
कागज को जहाज कर दिया,

आवारा नाविक सा
दौड़े लहरों पर
हुड़दंग मचाते,
जहाज ठुमकता
घूमे गलियों में
बचपन का राग सुनाते,

बेफिक्र हथेलियों से
छोटी साइकिल का
हैंडल पकड़े,
खाना फेंक कर
लाड़ में
माँ से झगड़े,

काश कि यहीं

थमी रहती जिंदगी

अनूठे बचपन की तरह,

खेल नाव खिलौने

बिखेर कर सोते

बेढंगे लड़कपन की तरह।

वर्जित है

मैनें

जवानी और बुढ़ापे को

आपस में

लड़ते देखा है,

जबसे मैं

पाँच या छह वर्ष का था

तबसे पिता को

इसकी तैयारी

करते देखा है,

सुबह

पहली किरण से पहले

कई किलोमीटर

बुढ़ापे को दौड़ाया है,

अस्सी वर्ष वाले

इस व्यक्ति के

जज्बे से आज भी

बुढ़ापा घबराया है,

मेरे आँगन में

वृद्धावस्था का प्रवेश

वर्जित है,

देख साहस दादा का

पोते-पोतियाँ लज्जित हैं,

अखाड़े की

मिट्टी से लेकर

बीहड़ की रेत तक,

शहर के

चंगुल से लेकर

एकड़ फैले खेत तक,

आलस, अवसाद, उदासी को

मैनें आँखों से भागते देखा है,

आठ दशक के

एक आदमी के आगे

मैंने जवानों को हांफते देखा है।

अंग्रेजी का 8

जीवन जैसे अंग्रेजी का 8 हो
जहां से शुरू वही तक पहुंचना
जो खुद कर बीत गया
वही अपनी पीढ़ी को करते देखना,

वही खिलौना, वही बचपना
वही टिफिन को भरते देखना
फिर कक्षा का फेरा फिर परीक्षा
फिर गलतियों पर उसे डरते देखना,
इस बार अधिकार हमारा है
वो जो बीत गया प्यारा था
यह भी हमको प्यारा है,
आंखे पिताजी जैसी होने लगी हैं
झुर्रीयों भरी काया है,

फिर घूम गई जिंदगी
उसी अंग्रेजी के 8 की तरह
वही सब शुरू से शुरू
जो बीता था
पुरानी बात की तरह।

देवनागरी

आधे अंग वस्त्रों वाली हड्डियाँ
मातृभाषा का फटा पन्ना लिए हाँडती,
पन्ने पर लिखी देवनागरी
निर्वस्त्र महिला सी लज्जित,
इंग्लिश बूटों तले रौंदी हुई
फरियादी की हथेलियाँ,
बाबूशाही पर क्राउन की
छाप को ढकता गांधी का चित्र!

जीवन का व्यापार

ज्ञान की बातें मानो अगर
तो जगत मिथ्या और धोखा है!
तुम कहते हो सत्य चुनो
फिर तुमको किसने रोका है?
अबोधों पर बोध का डाका
निर्धन पर माया का जाल
क्या चर, अचर, निराचर
बाट जोहता सबकी काल,
अर्पण, तर्पण सबका दर्पण
आँखों मे वैतरणी को पार
उतराने को डूबी नैया
ये है जीवन का व्यापार।

जुलूस

बस्ती के कुछ ऊबे हुए
लोगों की रचना
अलग-अलग रंगों में
बँटी संरचना,

टकराव परलोक में
बेहतर स्थापित करने को
जुलूस निकालते कुछ लोग
उन्माद करने को,

बेहतर सीढ़ी का ढोंग
ऊपर ले जाने खातिर
गिरे हुए लोग खड़े
एक दूसरे को उतिराने खातिर,
पहचानो नेतृत्व कर्ता और
नेतृत्व में कौन है शातिर!

खोखले सपने

माना कि
बीहड़ में धूप है
झुलसे हुए रूप हैं,
कम कपड़े और सामान हैं
यहाँ सांप बिच्छू
और खुला आसमान है,

वहाँ छत है
गाड़ी मोटर कार है
गोली कट्टा बारूद और
आबरू का व्यापार है,
और जगह बनाए रखने के लिए
स्वर्ग के अंदर कई नरक
अपने खोखले सपने के लिए।

कर्म

एक लोटा जल चढ़ाकर
पुष्प और कुछ फल चढ़ाकर
टीका रोली धूप दिखाकर
आंखें मूंद आसन बिछाकर
मन में तमाम उपहार गिनाकर
निकले अपने काम बनाकर,

लेकिन ज्यों ही
एक पल काम बिगड़ा
उससे तुम्हारा विश्वास उखड़ा
लगे अपना संताप सुनाने
सारे तीरथ देव गिनाने,

वह चेतना है
कोई दास नहीं!
कर्म तुम्हीं को करना होगा
अर्जुन जैसे स्वयं ही लड़ना होगा।

हिना

नवविवाहिता की मेहंदी से
कयास लगता है कि
जीवन कैसा होगा!

लबादे में लिपटा राजकुमार
जो दरवाजे पर
तनकर खड़ा है,
सक्षम है क्या
इस जन्म को
साकार बनाने में?

यह श्रृंगार ही नहीं
जीवन का
पहला रेखाचित्र है,
यह सोचकर
समय लगाती है
नारी मेहंदी रचाने में।

अगर रंग फीका चढ़ा
तो मन में
चिंता का भाव
उभर आता है,
इससे कोई
फर्क नहीं पड़ता,
मन खुद को
बहलाता है

कोई फरिश्ता बन
साथ निभाता है
तो कोई
इस रंग हिना को
कलंकित कर जाता है।

भाव

भाव छिपा है गहरा
मातृत्व की फटकार में
बाबूजी की मार में
बहनों की तकरार में
संगिनी की हर हार में,

और भी गहरे कारक हैं
यौवन का बसंत बहार में
खूबसूरती का संसार में
शिक्षा का परिवार में
ताकत का आहार में,

छिपे हुए भी लिख देता हूँ
प्रेम का उपहार में
शर्म का इजहार में
देवों का पालनहार में
पाप का संहार में।

आश्रय

पक्षियों की नींद खुली
जवाँ पेड़ की अंगड़ाई से,
आसमान को
बादलों में जकड़ा देख
उनमें भगदड़ मची
एक पेंग में पँहुचे
अपने-अपने ठिकानों पर
जो निकले थे
दाने-पानी की तलाश में,

मदहोश हवा संग
झूमते उल्लास में
तीर की तरह
घास में आ धँसी
मेघ की बूंदें,
आधा-अधूरा चुग्गा लिए
उड़ चले खग
अपनी आँखें मूँदे,

यौवन की फुहार पर

मदमस्त मदन सा
झूमता हुआ तरु
अपनी विशाल शाखाओं पर
जीवन को पोषित करता,
खड़ा चट्टान सा
खुद को
बारिश से बचाने को
प्रकृति तैयार खड़ी
निस्वार्थ प्यार लुटाने को,

वृक्ष पर
जीवन के चक्र का
एक अनूठा तंत्र
सीखो उस तरुवर से
आश्रितों को
आश्रय का महामंत्र।

सर्वोच्च

क्या आप सबसे सुरक्षित ऊंचाई
के बारे में जानते हैं?
क्या सबसे उच्च
हिमालय को मानते हैं?
लो उस पर भी चढ़
लोगों ने विजय ध्वज
लहरा दिया
सैंकड़ों मीटर ऊँचे तुंग को
नीचे झुका दिया,

फिर क्या राजा का
सिंहासन सबसे उच्च है?
उसे भी प्रजातन्त्र ने
उखाड़ दिया
हर एक किस्से को
अतीत के पन्नों में
गाड़ दिया,

फिर क्या नायक की कुर्सी
असीम बुलंद है?
यह भी जनता से
भय खाकर ही चलती है
जन समूह अगर रूठा तो
यह भी बदलती है,

फिर तो अफसरशाही ही
सर्वोच्च शिखर पर है,
लेकिन न्यायपालिका का हथौड़ा
इस पर भी चलता है
और एक दिन सूरज
इनका भी ढलता है,

फिर से सवाल उठता है
कि ऐसी कौन सी जगह है
जो सुरक्षा की दृष्टि से
सर्वोच्च है?
मेरे मोढ़े पर लटकते
नन्हे पैर देख
एहसास हुआ,
बच्चे के लिए
बाप के कंधे ही
सुरक्षा की दृष्टि से
श्रेष्ठ हैं।

विधान

नास्तिक बनना
बहुत सरल है,
कोई रोक-टोक
बंधन नहीं,
लेकिन
मस्तिष्क ज्यादा दिनों तक
बिना नियम के
संचालित नहीं हो पाता
और एक दिन
कचरे के बोझ तले दबकर
अवसाद ग्रस्त हो जाता,

जिंदगी के
बिखरे पन्नों को समेटने के लिए
और एक क्रम में लगाने खातिर
विधान जरूरी है,
नियमित दिनचर्या के लिए
दृढ़ विश्वास जरूरी है।

हार

हार का है अपना ही मजा
आंखों में एक शक्ति आ जाती है
मुखौटे टूटते हैं
असल सूरत दिख जाती है,

मजबूत कंधे, लोग
और गहरे शब्द,
बिछुड़ने में भी
वफाई और अदब,
मुश्किल है इन्हें ढूंढ पाना
जो हारा
उसी ने यह जाना,
हार का है अपना ही मजा!

भेद

वह जन्म देते ही
मृत्यु तय न करे
तो जीव अनियंत्रित हो
इस तरह भटके मानो
किसी चालक की गाड़ी का
ब्रेक फेल हो गया
जो सब कुछ
रौंदने पर आमादा है,

यह भय ही है
जो धर्म को इंसान से जोड़कर
जीवन के चक्के को
अधिकतम दूरी तक धकेलता है,

अगर उसकी दृष्टि से सोचें तो
उसका पहला नियम
हर उस चीज पर दया व रक्षा है
जो उसकी सृष्टि की संरचना का
अभिन्न अंग है,

उसके लिए

चींटी, हाथी,

वृक्ष और सरिताओं में

भेद नहीं,

सभी अनमोल हैं।

पंद्रह अगस्त

बंजर पड़े खेत में
रेगिस्तान के रेत में
खाली भूखे पेट में
एक आस है
दरकार है
चलो फिर पंद्रह अगस्त का
त्यौहार है,

गाड़ियों के धुएं में
सामंतों के कुएं में
क्रिकेट के जुए में
लोकतंत्र की मार है
चलो फिर पंद्रह अगस्त का
त्यौहार है,

बैंकों के ब्याज में
संसद की प्याज में
एमएसपी वाले अनाज में
बेवजह भीड़ है
बेबुनियाद कतार है

चलो फिर पंद्रह अगस्त का
त्यौहार है,

गंगा के पानी में
गुरुओं की वाणी में
फौजियों की जवानी में
बिना भाव प्रचार है
चलो फिर पंद्रह अगस्त का
त्यौहार है!

दौड़

गिलहरी से सीखो
न उड़ कर भी
उड़ने वालों के
दिल जीतने की कला,

दो पक्षी दाने चुगते
भले लड़ पड़ें
लेकिन गिलहरी को
कोई नहीं टोकता,
आधे जूठे दाने चिड़ियों के
आधे गिलहरी के
आपस में सामंजस्य का
यह अनूठा उदाहरण है।

गिलहरी का जीवन
कितना साधारण है
जिसमें उड़ते पक्षियों की
होड़ नहीं
वृक्ष से चुग्गे तक
कुछ और पाने की
दौड़ नहीं।

दीवार

मैं गुम-सुम छुप कर
एक किसी कोने से
रोक नहीं सका
दीवारों को आपस में
बातें कर रोने से,

हालांकि बाहर
दरवाजे पर ताला था
इसी के भीतर
माँ ने मुझे पाला था,
पिता की छड़ी पर
यह मुझपर हँसती थीं
मेरे रंग-बिरंगे मोम कलर से
कभी यह सजती थीं,

बुझी हुई सफेदी की परतें
जालों में लिपटी हैं
हर त्यौहार की
खुशबू इनमें सिमटी है,

एक कोने से मैंने

दीवारों की व्यथा देखी

बीतते दिनों संग

सूनेपन की कथा देखी।

कविता

टेढ़े-मेढ़े घुमड़े बादलों के समान
बेमौसम बरसते पानी और धूप
की प्रतिस्पर्धा के समान
कविता गढ़ती ठीक वैसे ही
जैसे पल क्षिण रंग बदले आसमान,

छिटकते अक्षर चमकीली तारों भरी रात्रि के जैसे
उड़कर झुंड मे इकट्ठे होते शब्द
जुगनू एकत्रित हो जाते जैसे
मिलकर बिखेरते सुगंध ज्ञान की
अक्षर पिरोते माला जैसे,

एक छोर जब रंगे पृष्ठ का
यह कयास लगाना मुश्किल है
चलती लेखक के अंतर्मन से
इसकी कहाँ कोई मंजिल है!

भागता हूँ

भागता हूँ रूठे मनाने को
भागता हूँ जो नहीं मिला पाने को
भागता हूँ जो हासिल उसे बचाने को
भागता हूँ वादे निभाने को
भागता हूँ फिर लौट आने को
भागता हूँ जीवन भर उस पल तक
उड़ने न लगूँ राख बन जब तक!

मत

मूंदी हुई आंखों से
धूल की परत हटाकर
कुछ दिनों खातिर
अपनी नींद को सुलाकर
वो फिर आ गए
मगरमच्छ को रुलाकर,

पैकेट पुराने पर
जिल्द नई चढ़ाकर
वादों की फेहरिस्त को
झूठ में डुबाकर
वो फिर आ गए
ऊंच-नीच के भेद को भुलाकर,

निकलने लगे थे
जिन रास्तों से मुंह छुपाकर
खीझते थे हाथ मिलाने में
चढ़ते थे गुर्रा कर
वो फिर आ गए
अपने पीछे भीड़ जुटाकर,

बहुत समझाया

कुछ लोगों को बिठाकर

मनाया रूठों को

आश्वासन दिलाकर

बीत गया

चले गए घर

स्याही की छाप दिखाकर।

नियंत्रक

सब पर उसी का नियंत्रण है
हर चीज उसकी इच्छा से होती है,

धुरी पर घूमती पृथ्वी
चाहे लट्टू की तरह नचा दे
और किसी का बाल भी बांका ना हो,
उसकी मर्जी हो तो
सूर्य को मुख में रखने के
किस्से भी सच हुए हैं,

वो एक बूंद से
जीवन बना दे,
चाहे तो रेगिस्तान में
सदाबहार उगा दे,
राजा राम को वन भेजे
और सुग्रीव को
बाली का राज दिला दे,

जो चाहे कर सकता है
सबसे ऊपर उसी की सत्ता है,
गलतफहमी के शिकार हैं

कुछ लोग
जो नियति पर
नियंत्रण चाहते हैं,

उसी ने रचे हैं
दिन कहीं रात,
अपनी मर्जी से
कोई न चुन सका
धर्म और जात।

असल संपदा

असल संपदा
बैंक या तिजोरी में
नहीं धरी जा सकती,
गहने-गठरी या
स्टांप-रजिस्ट्री से
नहीं गढ़ी जा सकती,

न ही यह
लगान का बोझ डाले
राजा के
खजाने में समाती है,
न ही यह
जजिया, जकात और
जब्त संपत्ति से आती है,

सोने की लंका का
मालिक भी
अंत में यह जान पाया,
आखिरकार श्री चरणों में
जब उसने ध्यान लगाया,

देखा कि

जीवन मूल्य ही वह खजाना है

बाकी तो

विनिमय का साधन है

इस हाथ आना

उस हाथ जाना है।

प्रण

कभी शूल है

कभी धूल है

कभी व्यर्थ है

कभी अनुकूल है

लेकिन सारे चक्रों से

निकलना जरूर है,

शरीर एक बार मरता है

मन हजार बार

प्राण एक बार उखड़ते हैं

चेतना हजार बार,

हम एक पैदाइश में

सौ बार जन्म लेते हैं

बार-बार टूट कर

नए संकल्प लेते हैं।

सुरक्षा

औरत घर का गहना है
संतान उस गहने में जड़े रत्न,
पुरुष एक तिजोरी है
जो अनमोल इस खजाने को
अपने सुरक्षा कवच से
ढक लेना चाहता है,

गहने की व्याकुलता है कि
दुनिया उस पर रीझे,
रत्न चाहते हैं कि
स्वतंत्र हो अपनी छटा बिखेरें,
लेकिन तिजोरी का
अपना धर्म है सुरक्षा!

विद्रोह

बेसुरे नारों के बीच
आजादी का
स्वर गूंज उठा !
सामने डिवाइडर पर
तैनात पुलिसकर्मी
जब अपनी टोपी संभालकर
कतार बनाने लगे
तो मैं समझ गया
आजादी
अपनी ओर आने लगी है,

कुछ देर बाद
भगदड़ में कोई कोना ढूंढा
और महसूस हुआ
आजादी
बस एक कपोल कल्पना है,

हम संघर्ष करते हैं
किसी का
राजपाट स्थापित करने को,

वामपंथ

दक्षिण को उखाड़ फेंकना

चाहता है,

तो दक्षिणपंथी

इतिहास की लीक पर

झण्डा लहराना चाहता है,

दोनों में कोई आ जाए

जिस पर गिरी लाठी

दर्द तो वही समझ सकता है,

चलो कुछ तो

राजनीतिक जमीन

तलाश रहे हैं,

लेकिन

उस नवयुवती का क्या

जिसने इसी साल

कॉलेज मे दाखिला लिया है?

और उन तमाम

बुजुर्गों का

जो निवृत्ति के बाद भी

लड़-मर रहे हैं

इंकलाब लाने को?

दरअसल

आजादी एक ख्याल है

जो सत्तापक्ष को भी डरा सकता है

कि उस तरफ

कतार ज्यादा न बढ़ जाए,

लोगों के जेहन में

इंकलाब

इस कदर न घर कर जाए,

फिर न

सिंहासन बचे न राज

सड़कों पर उछले ताज!

आम्रफल

कहा जाता है कि
होली अपने साथ त्योहारों की
झोली भी ले जाती है,
यहाँ से सिलसिला शुरू होता है
गरम रातों का
और चलता है तीज तक,
या यूं कहें
त्योहारों की बुआई वाले
बीज तक,

इस बीच
तीन से चार माह
काटने भारी पड़ जाते,
अगर भारत में
आम्रफल एक सुखद
मौसम न लाते,

यूं ही इसकी पत्तियां
दरवाजे को
शुभ नहीं बनातीं,

यह संकेत है

दहकती जिंदगी में

रस भी है

और आस भी,

जिंदगी अगर खट्टी है तो,

समय समय पर

इसमें मिलती है

आम्रफल सी

मिठास भी।

अवलंब

निसन्देह एक राजनेता के लिए
जरूरी है कि धर्म को
अपने ऊपर हावी न होने देना,
लेकिन यह बात सभी पर लागू होती है,
पहले भी कई बार छले गए
और धर्म को अवलंब बना
मुल्क ले गए,
जो बचे कुछ
इसी मिट्टी के लाल बने,
तो कुछ इसी धरा पर काल बने।

रोष

मेरे भीतर

एक आग पलने लगी है!

मैनें

कभी नहीं सोचा था

कि कोई वाकया

मेरी समझ पर

हावी हो जाएगा,

मेरी हंसी

मेरी तरक्की

या मेरा सुकून

सब बेमानी लगे,

ऐसा मुझे

अंदर से झुलसाएगा।

मेरे भीतर

एक आग पलने लगी है!

अभी यह अपनी

शैशवावस्था में है,

परिस्थितियों पर

इसका जोर नहीं,

यौवन भी आएगा
और उग्र रूप भी,
तब तक
कोई शोर नहीं।

संस्था को देश के
राजनैतिक गलियारों का
पैखाना बना दिया,
चापलूसों ने
चाटुकारिता के चक्कर में
मेरा
सोया हुआ ज्वालामुखी
जगा दिया।

वेदना

जैसे
विकार से ग्रसित
शरीर के किसी हिस्से को
दर्द महसूस होना
बंद हो जाता है,
वैसे ही
कोई मानसिक अवसाद से
पीड़ित व्यक्ति ही होगा
जिसको कष्टों का
आभास न हो,

यहाँ इस लोक में
जिसने माँ की कोख से
जन्म लिया,
उसी वक्त
उसकी विदाई का
कारण भी तय हुआ,
उसमें क्या देव
क्या दानव
क्या दैत्य

क्या मानव

अवधपति के
अपने दुख थे,
तो लंकापति को
कुटुंब विनाश का दुख,
धर्म रक्षा हेतु
द्वारकाधीश के
कुल का विनाश
जग-जाहिर है,
ईसा के उपदेशों को भी
तभी मान्यता मिली
जब दैहिक यातनाओं की
पराकाष्ठा को पार किया,

अगर ईश्वर और
परमपिता भी
वेदनाओं से मुक्ति
न पा सके,
तो मानव की
औकात ही क्या!

रसूख

हर बार

लीक का नया आयाम

रचने को,

पल-पल लड़ा

विपक्ष की प्रत्यंचा से

बचने को,

रसूख देख

रीझते लोग

भले खड़े कतार में,

खो गया

समाज की भीड़ में

नेता

अब शामिल नहीं

परिवार में,

जेहन में

समीकरणों का अंबार लिए,

मन में

उदासी का गुबार लिए,

मुस्कुराकर अभिवादन
सभी स्वीकार कर,
जिए अनगिनत
इच्छाएं मार कर,

तिरस्कारों की भट्टी में
तप कर निकला होगा,
मोम की तरह
कई ढांचों में पिघला होगा,

कौन जाने
चमकती चाँदनी के
इन राजों को,
कीमत चुका पहने गए
कंटीले ताजों को,
हार-जीत दुश्मनी-दोस्ती
के सवालों पर
घिरा मिला समाज के
सभी बवालों पर,

कौन जाने भला
नेता का धर्म क्या?
सीने में उफनती
आग का मर्म क्या?

सफर

एक रोज मेरी
ज़िंदगी से मुलाकात हुई,
साक्षात्कार बिल्कुल ऐसे
जैसे अगला जन्म लिया हो
और पिछले की धुंधली यादें
साथ आ गई हों,

उसने बिना कुछ बोले पूछ लिया,
कितनी दूर तक जाना है?
मैंने बिना मुँह खोले उत्तर दिया,
तुम्हारे साथ जुडने से
सफर इतना सुहाना हो जाएगा
पलक झपकेगी और
हमें जमाना हो जाएगा।

महासंग्राम

बेहतर होता है
उर में जब
ज्वालामुखी फलता है,
आग लगे जब भीतर
तो महाभारत का
पार्थ बनता है।

आसान नहीं
जग में कृष्ण हो जाना,
गोकुल, सखा व गैया संग
राधा का खो जाना।

देखे हैं अंगार बरसते
भीतर जितनी थी ज्वाला,
एक तरफ थी अगणित सेना
दूजी ओर खड़ा ग्वाला।

अशांत मन
एक महासंग्राम रचता है,
तब कोई
महावन से निकल
द्वारकाधीश बनता है।

रिसाव

जीवन गढ़ने वाले ने
उसमें एक सुराख छोड़ा
जिससे समय रिसता रहे,
मनुष्य कसरत करे
ताकत के लिए,
या स्त्री श्रृंगार करे
सौन्दर्य के लिए,
समय उसे घिसता रहे।

ताकत बढ़ कर
सिंहासन न छू ले,
या स्त्री सौन्दर्य देवों को
न मोह ले,
काल ने
खींच दी लकीर
जिसके आगे न
बढ़ पाया कोई,
क्या रावण

प्रभु राम और

माँ सीता?

रिसाव युगों को

ले बीता।

पर्व

सूई हो या भाला
फूल हो या माला
सफेद हो या काला
सारा गड़बड़ झाला,

बातों का बवंडर
योजनाओं का खंडहर
थमा हुआ कैलेंडर
कानून का सरेंडर,

फीते का लाल रंग
छिड़ी हुई अंदरूनी जंग
लथपथ खेतों में अधनंग
कुकर्मी का सत्संग,

आग से लकड़ी खींचकर
अपनी आँखें मीच कर
लहू से क्यारी सींच कर
मन के कपाट को भींच कर,

स्याही वाली छाप लगाकर

अपनी नैया आप डुबाकर

आप ही हँसते बाहर आकर

पाँच वर्ष का पर्व मनाकर।

उमंग

जवानी एक अहसास है
जो दिमाग में
भर जाए तो
बुढ़ापे में आनंद भर दे,
और जो युवा मन से
हट जाए तो
भरे यौवन को
पाबंद कर दे,

इसका कोई अंत नहीं,
बालों पर आई सफेदी से भी
इसका कोई वास्ता नहीं,
तो जब तक
है सांस
जीवन के इस रंग में,
अभी तो तरुणाई बाकी है
जियो इस उमंग में!

बेकारी

आंकड़ों का
पीला पन्ना सुनाने को,
बेरोजगार युवा
बैठा है ट्विटर पर
नफा-नुकसान गिनाने को,
जीडीपी और महाशक्ति का
ज्ञान बहुत है इनके पास
देश तो कर गया
न जाने किस जगह अटक गया
आकर इनका विकास,

संसद में भी
इतनी उत्तेजना नहीं
बजट को लेकर,
जितनी बेकारों की फौज में थी
डेढ़ जीबी का दाम देकर,
सारा भार अचानक
उन युवा कंधों पर आ पड़ा,
जो खलिहरी का भी भत्ता लेने
घंटों लाइन में था खड़ा।

मौकापरस्ती

मौकापरस्ती एक
ऐसी नस्ल है
जो सभी में
घुल-मिल जाती है,
अचानक एक दिन
झुकी सी आँखें
तर्रा जाती हैं,

भौचक्के रह जाओगे
ऐसा गुर्राती हैं,
फड़फड़ाकर
स्वान की तरह
रास्ते को रोक देते हैं,
उनसे बचना
जो लोग आँखों से
भौंक लेते हैं।

जाल

एक रोज
विशाल वृक्ष के झुरमुट में
लगे जाले पर नजर गई
असंख्य कीटों के साथ
मकड़ी भी
सूख कर कांकड़ हो गई थी,

जीवन भी मानो
उन कीटों जैसा
हो चला है
जो सघन जाले की
चपेट में
दम तोड़ चुके हैं।

कल्पनाएँ

किसी ने सन्नाटे में
सुनी खड्गों की टंकार
तो कोई मजनू बन सुनने लगा
पायल की झंकार,

कोई महलों के झरोखों से
चित्त भर लाया
तो कोई दर–दर भटकते
वैरागी का राग गढ़ लाया,

किसी ने आकाश की बिजली का
वज्र बना दिया
तो किसी ने बरखा की छम-छम पर
सुर चढ़ा दिया,

कोई जंगल के तिमिर से
दहशत दे गया
तो कोई आरण्य की चाँदनी को
रति-रास कह गया,

किसी ने उफनते तूफ़ानों पर
कश्तियाँ दिखा डाली
तो कोई घूमा धरती के चहुं ओर
सीमा मिला डाली,

कोई जीत का सिकंदर बन
क्रूर हो गया
तो कोई हारा इतना कि
विजय से दूर हो गया,

किसी ने अग्नि का
ज्वाला रूप दिखलाया
कोई दहन कर पाप मन का
दीप बन आया,

कोई झोंका श्मशानों से
दुर्गंध ले आया
कोई महका मलयाचल से
सुगंध ले आया,

गढ़े हुए इन परिदृश्यों को
कोई कहे रचियता
कोई पागल कहे
कोई कविता।

कर्ता

सबसे बड़ा लोक कौन?

सबसे बड़ा शोक कौन?

सबसे बड़ा मोक्ष कौन?

कौन धीरज विहीन है?

किसकी संवेदना हीन है?

किस कारण सब क्षीण है?

तपस्वियों की काया का

कुलीनों की माया का

शीशमहल की छाया का

आदि और अनंत का

प्रकृति के विध्वंस का

कौन है कर्ता अंत का?

कतराता हूँ

मैं हर रोज
असंख्य चीखों से
चकरा जाता हूँ,
जब पलक झपकती हैं
हाथ खून से
सना पाता हूँ,
मानसिक रोगियों की तरह
खुद ही खुद
गुर्राता हूँ,

कभी क्रोधित होता हूँ
कभी लज्जित तो
कभी घबराता हूँ,
कुछ दिनों से
सीमा पर शौर्य के
किस्सों के बीच
सिसकियाँ सुन कर
डर जाता हूँ,
मैं इसीलिए
अखबार पढ़ने से
कतराता हूँ।

गाँव

रोटी, कपड़ा,
मकान और खलिहान
इससे ज्यादा कुछ
चाहता नहीं किसान,

चार-पाई, चादर और
नीम की खुली छाँव
सीमित सरल निष्कपट
होते हैं गाँव,

खेत से घेर तक
भूसे के ढेर तक,
गाय की सानी तक
नलके के पानी तक,

बहुत संकीर्ण इनकी
दुनिया का आकार,
लहू, पसीना, माटी से
बना हुआ संसार।

सार

हवन की वेदी पर
प्रकट अग्नि को
देवता मानता हूँ,
कब कहाँ देवत्व का
इस्तेमाल हो
जानता हूँ,
फिर भी बेचैन हूँ
जंगल की
दहकती ज्वाला देख,
अनगिनत असहायों का
रखवाला देख,

अंजुरी में जल भर लेते
आचमन का प्रसाद,
बहा कर सैंकड़ों घर
कौन लेता
बर्बादी का स्वाद,
ड्योढ़ी पर
पवन को भी मैनें
प्रणाम किया है,

घोंसले लदे वृक्षों को
पलक झपकते
इसने भी रौंद दिया है,

किसे देव कहूँ?
किसे दानव समझूँ?
सार खोजने निकला
तो श्मशान नजर आया,
ठंडी पड़ी राख में
भगवान नजर आया।

साथ

अकेलेपन का

अपना आनंद है

हर क्षण स्वतंत्र

हर पल स्वच्छंद है,

न कलह का डर

न ही कोई नोक-झोंक,

पारिवारिक बंदिशें

और सामाजिक नियमों से

सरोकार नहीं,

दूर तक उड़ सकते हैं

जिनका परिवार नहीं,

अनजान लोग

बेतुकी बातें,

रस नया

दोस्ती नई,

हर भीड़ और

महफ़िल के केन्द्रबिन्दु,

न जवाबदेही

और न ही

रिश्तों को

बनाए रखने का प्रयास,

सबसे दिल्लगी

सभी से आस,

पर

जो मीठा ज्यादा हो

जीवन का पहलू

चल नहीं पाता है,

मुश्किल में हो जीवन

तो असल मूल

पता चल जाता है,

माना कि

अपनों के साथ

नोक-झोंक और

तकरार है,

लेकिन

खुशनसीबी है

उनकी

जिनके साथ

परिवार है।

थाह

सबसे गहरा
अगर सागर है
तो
प्रशांत की
गहराई भी
नापी जा चुकी,

सबसे गहरा
अगर पाताल है
तो
राजा बलि ने
उसे भी
खंगाल दिया,

अगर हृदय के
गर्त को
सब पर भारी मानें
तो
साधकों ने
सबसे अनमोल
हृदयों को

जीत लिया,

ऐसे में

न नदी

न वेग

न तुंग की ढलान

न उर

न मन

कोई भी

ऐसी चीज नहीं

जिसकी टोह

न ली जा सके,

फिर सबसे गहरा

क्या बचा?

अंधकार की

कन्दराओं से

विचार की

असीमित सीमाओं तक

न दिख सकने वाली

गहराई

प्रेम है,

जिसकी थाह लेना

नामुमकिन है।

नीड़

एक पक्षी को
खुले मैदान में रखे
शिवलिंग से
जनेऊ उतारते देखा,

कई दिनों
लगातार
घंटों मेहनत
और प्रयास से
उसे वह
प्राप्त हो सका
जो चाहिए था,

पास के वृक्ष पर
नन्हें घोंसले में
सफेद धागों का
जाल देखा,
मानों
राजमहल में
नया कालीन
बिछ गया हो,

नीम की सींकों से
कसा हुआ
राजभवननुमा
यह बसेरा,
जिसमें उस पक्षी ने
सुख-सुविधाओं के
सभी साधन
बटोर लिए,

एक रोज
जब आँख खुली
तो
महल ध्वस्त था,
कालीन
धूल में सना
क्यारी में पड़ा था,
तिनके
हवा संग पानी
सह न सके,

वह पक्षी आस लिए
अपने नीड़ को
ताकता रहा।

होड़

अफीम की
लहलहाती
फसल के बीच
एक रास्ता
कटता है,
जो दोनों तरफ
रसीले अंगूर, सेब और
महुआ के वृक्षों से
ढकता है,

न सूर्य की
तीखी किरणों का कोप
न ही इस ओर
बहुसंख्यक
भीड़ का प्रकोप,

बस रास्ते में
बेसुध
नशे में झूमते
कुछ लोग

जिनको स्वर्ग से

नकारा गया,

उन्होंने बना डाला

यह

नरक भरा यह लोक,

यहाँ

अय्याशी, नशा,

आजादी

सब है,

फिर भी होड़

स्वर्ग की क्यों?

प्रतिज्ञा

जिसकी तासीर
खरा सोना,
भला कोई उसका
मोल लगा सकता?
सागर कितना भी
शांत बहे,
क्या मटके में
वह आ सकता?

जिसका
अंतर्मन हो
मतंग,
उसको कोई
बांध नहीं सकता,
सिंह बंधा
जंजीरों में तो क्या,
फितरत वह
त्याग नहीं सकता,

जिसकी

राहों में हो

रोष भरा

कंटकों से करते

आह नहीं,

गगन चूमते

बाजों को

ऊंचाई की

परवाह नहीं,

डटे हुए

तूफ़ानों में

नाविक

झोंकों की मार

नहीं गिनते,

अश्वों के

खुर को

नापने वाले

सहसवार

मैदान में

नहीं गिरते,

जिसकी जिव्हा ने

गरल चखा

विष पी-पीकर जो
अमर हुआ,
नीलकंठ
अविनाशी के जैसा
क्षत्रप वही
फिर प्रबल हुआ,

ब्याह में
थिरकने वाले
अश्वों को
रणभूमि की होती
चाह नहीं,
बाणशैया पर लेटे
प्रतिज्ञावानों से,
मृत्यु को भी
मिलती राह नहीं।